समक्ष- जी. सी. मितल और जय सिंह सेखों, जे.जे.

रूप चंद चौधरी,-याचिकाकर्ता
बनाम
श्रीमती. रंजीत कुमारी, प्रतिवादी

1989 का नागरिक संशोधन क्रमांक 1054
19 अप्रैल, 1990.

सिविल प्रक्रिया संहिता (1908 का 5)-ओ. 6, आरएल. 17 एवं ओ. 37, रिस. 1 और 2 विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963-एस। 29-ओ. 37, आरएलएस के तहत मुकदमा दायर किया गया। 1 और 2 बयाना राशि की अग्रिम राशि की वापसी और विक्रय-पत्र के गैर-निष्पादन के लिए हर्जाना और ब्याज के लिए - अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए डिक्री मांगने और मुकदमे में वैकल्पिक राहत के रूप में मूल राहत का दावा करने के लिए संशोधन के लिए आवेदन की अनुमति नहीं दी जा सकती है। .

माना गया कि एक बार बयाना राशि/अग्रिम की वापसी या हर्जाना देने के लिए मुकदमा दायर किया जाता है, तो ऐसा वादी खुद को विशिष्ट प्रदर्शन की वैकल्पिक राहत से वंचित कर देता है, भले ही मुकदमे में दावा किया गया हो। यदि ऐसा है, तो उसे पहली राहत के रूप में अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन और वैकल्पिक राहत के रूप में बयाना राशि/अग्रिम और/या हर्जाने की वापसी का दावा करने के लिए बाद में अपनी याचिका में संशोधन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यह मुख्य रूप से इस नियम पर है कि बयाना राशि/अग्रिम और/या हर्जाने की वापसी का दावा एक या दूसरे कारण से अनुबंध की अस्वीकृति पर आधारित हो सकता है और एक बार अनुबंध अस्वीकार हो जाने पर, विशिष्ट प्रदर्शन की राहत उपलब्ध नहीं होगी। या तो वैकल्पिक राहत के रूप में जैसा कि प्रेम राज बनाम डी.आई.एफ.एच. में आयोजित किया गया था। एंड सी. लिमिटेड, एआईआर 1968 एससी 1355, न ही ऐसी राहत संशोधन द्वारा स्वीकार्य होगी जैसा कि इस मामले में करने की मांग की गई है। अत: वादपत्र में संशोधन का आवेदन खारिज किये जाने योग्य है।

(पैरा 13 एवं 19)

तरसेम सिंह बनाम दलजीत कौर, 1985 पीएलजे 534।

(ख़ारिज)

धारा 115 सी.पी.सी. के तहत याचिका न्यायालय के आदेश के पुनरीक्षण हेतु, श्रीमती रेखा मित्तल, पी.सी.एस. सब जज प्रथम श्रेणी, चंडीगढ़ दिनांक: 28 मार्च, 1989 ने आवेदन की अनुमति दी और वादी द्वारा वाद में संशोधन के लिए आवेदन किया और 200 ररुपये की लागत के भुगतान के अधीन प्रतिवादी को मुआवजा देने के लिए ।

दावा : विशिष्ट प्रदर्शन के लिए

पुनरीक्षण में दावा : निचली अदालत के आदेश को उलटने के लिए।

याचिकाकर्ता की ओर से अशोक भान, वरिष्ठ अधिवक्ता और मदन देव, अधिवक्ता ।

प्रतिवादी की ओर से एस. पी. गुप्ता, अधिवक्ता।

निर्णय

जी. सी. मितल, जे. (मौखिक)

(1) निर्दिष्ट समय के भीतर बिक्री विलेख निष्पादित नहीं करने के लिए अग्रिम राशि और हर्जाना और ब्याज के रूप में समान राशि की वापसी के लिए मुकदमा दायर करने के बाद, अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए डिक्री लेने के लिए मुकदमे में संशोधन करने की अनुमति दी जा सकती है और उस व्यक्ति द्वारा दायर मुकदमे में वैकल्पिक राहत के रूप में मूल राहत का दावा करना जो खरीदने के लिए सहमत है, एक कानूनी मुद्दा है जिसे हमें इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए संदर्भ पर निर्धारित करने के लिए कहा जाता है। हमारा जवाब है कि संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती.

(2) रूप चंद चौधरी 25 जनवरी 1988 को अपना मकान नंबर 4, सेक्टर 9-ए, चंडीगढ़ श्रीमती रंजीत कुमारी को . 18,50,000 में बेचने पर सहमत हुए और पूर्व . बयाना राशि के रूप में 50,000 लिया। बिक्री 25 जून, 1988 तक पूरी होनी थी। 27 जनवरी, 1988 को रु. 10 मई, 1988 को उसे 1,50,000 रुपये और प्राप्त हुए। इस समय तक, विक्रेता को क्रेता से 4,00,000 रु. रुपये प्राप्त हो चुके थे।

(3) पार्टियों ने पारस्परिक रूप से तारीख को दो बार बढ़ाने पर सहमति व्यक्त की: एक बार 10 जुलाई, 1988 तक और दूसरी बार, 29 जुलाई, 1988 तक।

(4) श्रीमती. रंजीत कुमारी, जिस व्यक्ति को घर खरीदना था, ने रुपये की वसूली के लिए 17 अगस्त, 1988 को सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में संहिता) के आदेश 37 नियम 1 और 2 के तहत मुकदमा दायर किया। रूपचंद चौधरी, जिसे घर बेचना था, के खिलाफ 8,30,510 रु. ब्रेक अप में, बयाना राशि/अग्रिम की दोगुनी राशि की वसूली, साथ ही बयाना राशि/अग्रिम पर 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज की वसूली का दावा वाद की तारीख तक किया गया था। उन्होंने 18 अगस्त, 1988 से डिक्री और वसूली की तारीख तक 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भी दावा किया।

(5) मुकदमे की सूचना मिलने पर, प्रतिवादी ने बचाव के लिए छुट्टी के लिए आवेदन किया। इसके बाद वादी ने संहिता के 6 ऑर्डर 17 के तहत एक आवेदन दायर किया ताकि वादपत्र में संशोधन किया जा सके और विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री मांगी जा सके और वैकल्पिक रूप से, मूल वादपत्र में जिस राहत का दावा किया गया था। प्रतिवादी की ओर से संशोधन आवेदन का विरोध किया गया। ट्रायल कोर्ट ने 28 मार्च, 1989 के आदेश द्वारा, इस निष्कर्ष पर संशोधन की अनुमति दी कि कार्रवाई का कारण नहीं बदलेगा, न ही प्रस्तावित संशोधन से मुकदमे की प्रकृति में बदलाव होगा। यह भी देखा गया कि सुप्रीम कोर्ट ने तय किया है कि संशोधन की अनुमति तब भी दी जा सकती है, जब तक कि कोई नया मामला स्थापित करने का प्रस्ताव न हो, जब तक कि इससे दूसरे पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े, जिसके लिए लागत के साथ मुआवजा नहीं दिया जा सकता। हालाँकि, आदेश में राम चंद बनाम करमवीर (1) में एस. पी. गोयल, जे. के फैसले का भी संदर्भ दिया गया था।

(6) प्रतिवादी ने व्यथित महसूस किया और सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत पुनरीक्षण के लिए इस न्यायालय में आया और मामला 7 अगस्त, 1989 को जे. वी. गुप्ता, जे. के समक्ष रखा गया, जिनके समक्ष वादी की ओर से भरोसा रखा गया था। तरसेम सिंह बनाम दलजीत कौर (2) में एस.एस. कांग, जे. का सीधा निर्णय जिसमें तथ्य कमोबेश एक जैसे थे। एस.एस. कांग, जे. ने संशोधन को अस्वीकार करने वाले ट्रायल कोर्ट के आदेश को रद्द कर दिया था और इस तथ्य के बावजूद कि मूल

(1) 1987 पीएलजे। 611.

(2) 1985 पीएलजे। 534.

मुकदमे में बयाना की वसूली की राहत थी, पहली राहत के रूप में विशिष्ट प्रदर्शन की डिक्री प्राप्त करने के लिए वाद में संशोधन की अनुमति दी थी। केवल धन/क्षतिपूर्ति की मांग की गई थी। विद्वान न्यायाधीश ने उस निर्णय की सत्यता पर विचार करने के लिए मामले को एक बड़ी पीठ के पास भेज दिया। इस तरह मामला हमारे सामने रखा गया है।

7) विद्वान वकील को विस्तार से सुनने और बार में उद्धृत निर्णयों पर विचार करने के बाद, हमारा विचार है कि तरसेम सिंह के मामले (सुप्रा) में सही कानूनी स्थिति का चित्रण नहीं किया गया है।

(8) इस बिंदु पर अन्य प्रत्यक्ष निर्णय जय भगवान बनाम राजा राम, (3) में जे. अग्रिम और हर्जाने की वापसी के लिए एक मुकदमे में पहली राहत को रद्द कर दिया गया। वहीं,. तरसेम सिंह के मामले (सुप्रा) में निर्णय पर ध्यान दिया गया और उसे प्रतिष्ठित किया गया।

(9) हमने इस न्यायालय के अन्य निर्णयों को देखा है और हमारी राय है कि दोनों निर्णय टिक नहीं सकते हैं और एक को खारिज करना होगा। विवाद को सुलझाने के लिए मामले पर कानूनी सिद्धांतों पर गहराई से विचार करना होगा।

(10) पहला मामला जिसकी कुछ प्रासंगिकता है वह अर्देशिर बनाम फ्लोरा ससून (4) है। उसमें, विशिष्ट निष्पादन के लिए मुकदमा दायर किया गया था, लेकिन मुकदमे की सुनवाई के दौरान, वादी ने विशिष्ट निष्पादन के लिए दावा छोड़ दिया और राहत को बयाना राशि/अग्रिम और क्षति की वापसी तक सीमित कर दिया। मामले के तथ्यों पर, यह माना गया कि नुकसान का दावा करने के लिए विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मुकदमे में संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह नियम का मामला नहीं था, बल्कि उस मामले के अजीबोगरीब तथ्यों पर था।

(11) अगला मामला सुंदरमय्यार बनाम लागडीसन (5) है। वहां क्रेता ने अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए मुकदमा दायर किया, लेकिन उसे यह राहत इस आधार पर देने से इनकार कर दिया गया कि मुकदमा दायर करने से पहले, उसने विक्रेता को एक पंजीकृत नोटिस भेजा था कि चूंकि वह (विक्रेता) अपने हिस्से का पालन करने में विफल रहा है। अनुबंध के तहत, वह (क्रेता) अग्रिम राशि वापस करने और क्षतिपूर्ति के बराबर राशि पाने का हकदार होगा। इसके बाद, विशिष्ट प्रदर्शन का दावा करने के लिए एक और नोटिस जारी किया गया और वादी ने रिफंड और क्षति का दावा करने के लिए पहले का नोटिस वापस ले लिया। इन तथ्यों पर, इसे निम्नानुसार माना गया:

> "यह एक अनुबंध के पक्ष के लिए खुला नहीं होगा, जिसने एक बार उल्लंघन को स्वीकार करने के लिए चुना है, यह मानते हुए कि दूसरे पक्ष की ओर से उल्लंघन हुआ है, उस चुनाव को रद्द करने और अनुबंध को ऐसे मानने के लिए जैसे कि यह अस्तित्व में था। हम इसका सम्मान करते हैं दिनांक 22 मई, 1958 का नोटिस अपीलकर्ता द्वारा अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन को प्राप्त करने के अपने अधिकार के निश्चित परित्याग के समान है। जैसा कि अर्देशिर मामा बनाम फ्लोरा ससून, आईएलआर 52 बॉम, 597 में प्रिवी काउंसिल द्वारा बताया गया है: (एआईआर) 1928 पीसी 208) विशिष्ट निष्पादन के मुकदमे में वादी को हमेशा अनुबंध को अभी भी विद्यमान मानना चाहिए; उसे अनुबंध की तारीख से मुकदमे की सुनवाई के समय तक अपनी भूमिका निभाने के लिए अपनी निरंतर तत्परता और इच्छा साबित करनी होगी अनुबंध और उस मामले को पूरा करने में विफलता निस्संदेह विशिष्ट प्रदर्शन के लिए उसके दावे को अस्वीकार कर देगी। इसलिए, जहां बिक्री के अनुबंध के एक पक्ष ने नुकसान के लिए दावा किया है, तो दूसरे पक्ष द्वारा इसके

(3) 1989 (2) आर.एल.आर. 214

(4) ए.आई.आर. 1928 पी.सी. 208.

(5) ए.आई.आर. 1965 मद्रास 85.

उल्लंघन के आधार पर अनुबंध को समाप्त मानने के लिए उसकी ओर से एक निश्चित चुनाव होगा और उसके बाद कोई मुकदमा नहीं होगा। विशिष्ट प्रदर्शन को उसके द्वारा बनाए रखा जा सकता था, क्योंकि, इस तरह के चुनाव से, उसने खुद को यह दावा करने से अक्षम कर दिया था कि वह अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक था।"

इस तथ्य के बावजूद कि विशिष्ट निष्पादन के लिए एक मुकदमा दायर किया गया था, राहत को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि मुकदमा दायर करने से पहले, वादी ने अग्रिम और क्षति की वापसी का दावा करने के लिए अपना उपाय चुना था और यह केवल अनुबंध का इलाज करने पर ही किया जा सकता था। अंत में, वादी को विशिष्ट निष्पादन की राहत का दावा करने से वंचित कर दिया गया। यह मामला हमारे समक्ष शामिल बिंदु के निर्णय पर असर डालेगा। इसी तरह का दृष्टिकोण हरि कृष्ण बनाम के.सी. गुप्ता (6) और अइसाबी बनाम गोपाल कोनार (7) में लिया गया है।

(12) फिर हमारे पास सुप्रीम कोर्ट का निर्णय, प्रेम राज बनाम डी.एल.एफ. है। एच. एंड सी. लिमिटेड, (8). यह मामला संबंधित बिंदु के निर्णय के लिए भी है। महत्वपूर्ण यहां, जिस व्यक्ति को खरीदना था, उसने यह घोषणा करने के लिए एक मुकदमा दायर किया कि उसके खिलाफ बिक्री का अनुबंध अनुचित प्रभाव से प्राप्त किया गया था, जो शून्य और निष्क्रिय था। साथ ही, मुकदमे में वैकल्पिक प्रार्थना उसी अनुबंध के विशिष्ट पालन की डिक्री देने के लिए थी। इस पर निम्नानुसार शासन किया गया:

"……जहां तक विशिष्ट प्रदर्शन की राहत का सवाल है, मामले की जांच विशिष्ट राहत अधिनियम के प्रावधानों के आलोक में की जानी चाहिए। इस संबंध में विशिष्ट राहत (अधिनियम) की धारा 37 का संदर्भ दिया जा सकता है 1877 का क्रमांक 1), जिसका निम्नलिखित प्रभाव होगा:

'एक वादी जो किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के लिए लिखित रूप में मुकदमा दायर करता है, वह वैकल्पिक रूप से प्रार्थना कर सकता है कि यदि अनुबंध को विशेष रूप से लागू नहीं किया जा सकता है, तो इसे रद्द कर दिया जाएगा और रद्द कर दिया जाएगा, यदि यह अनुबंध की अवधि को लागू करने से इनकार करता है वास्तव में, इसे रद्द करने और तदनुसार वितरित करने का निर्देश दिया जा सकता है।'

'इस धारा द्वारा यह स्पष्ट रूप से प्रदान किया गया है कि अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए वादी वैकल्पिक रूप से अनुबंध को रद्द करने के लिए मुकदमा कर सकता है, लेकिन इसका विपरीत प्रदान नहीं किया गया है। इसलिए, वादी के लिए समझौते को रद्द करने और विशिष्ट प्रदर्शन के लिए वैकल्पिक मुकदमा दायर करना संभव नहीं है। विशिष्ट राहत अधिनियम, 1877 की धारा 35 में कहा गया है कि वे सिद्धांत जिनके आधार पर किसी अनुबंध को रद्द करने का निर्णय लिया जा सकता है। लेकिन इस धारा या अधिनियम की किसी अन्य धारा में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है कि समझौते को रद्द करने के लिए मुकदमा करने वाला वादी विशिष्ट प्रदर्शन के विकल्प के रूप में मुकदमा कर सके। हमारी राय में, चूक जानबूझकर की गई है और अधिनियम का इरादा यह है कि वादी के लिए ऐसी कोई वैकल्पिक प्रार्थना खुली नहीं है। यह दृश्य "फ्राई ऑन स्पेसिफिक परफॉरमेंस, 6वां संस्करण, पृष्ठ 493" के निम्नलिखित अंश से सामने आता है-

(6) ए.आई.आर. (36) 1949, इलाहाबाद 440।

(7) ए.आई.आर. 1989 केरल 134.

(8) ए.आई.आर. 1968 एस.सी. 1355

'यह टिप्पणी करना बाकी है कि वादी, एक अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए एक कार्रवाई लाते हुए, विकल्प में दावा कर सकता है कि, यदि अनुबंध लागू नहीं किया जा सकता है, तो इसे रद्द किया जा सकता है और रद्द किया जा सकता है, बशर्ते कि वैकल्पिक राहत हो तथ्यों की एक ही स्थिति पर आधारित है, हालांकि कानून के संबंध में अलग-अलग निष्कर्ष हैं। जब विक्रेता द्वारा कार्रवाई की जाती है, और क्रेता का कब्ज़ा हो गया है, तो इस वैकल्पिक दावे में किराए और मुनाफे का लेखा-जोखा शामिल हो सकता है। लेकिन पहले ही बताए गए कारण के लिए, धोखाधड़ी के लिए लेनदेन को अलग करने या वैकल्पिक रूप से, समझौते के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए एक मुकदमा चांसरी की अदालत में कायम नहीं रखा जा सकता है। और राहत के लिए वैकल्पिक दावों के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के नियमों के प्रावधानों के बावजूद, यह संभव लगता है कि अभी भी उसी निष्कर्ष पर पहुंचा जाएगा, इस आधार पर कि दावे असंगत और शर्मनाक थे।"

यही सिद्धांत कावले बनाम पूले, (1863) 71 ईआर 23 में प्रतिपादित किया गया है जिसमें चांसरी न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि ऐसे मामले में जहां एक विधेयक धोखाधड़ी द्वारा प्राप्त निर्णय और उसके बाद के समझौते का आरोप लगाता है, और पूरे लेन-देन को धोखाधड़ी के आधार पर, या डिफ़ॉल्ट रूप से समझौता करने के आधार पर रद्द कर दें, और न्यायालय की राय है कि धोखाधड़ी का मामला विफल हो जाता है। यह समझौते को लागू नहीं करेगा, लेकिन पूरे विधेयक को खारिज कर दिया जाना चाहिए।'

उपरोक्त उद्धरण से यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि हालांकि घोषणा/क्षतिपूर्ति की वैकल्पिक राहत के साथ विशिष्ट प्रदर्शन की पहली राहत का दावा करने का मुकदमा स्वीकार्य है, लेकिन इसका उलटा सच नहीं है। उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया कारण यह है कि कोई केवल समझौते को रद्द करने पर नुकसान का दावा कर सकता है, लेकिन समझौते को रद्द करने पर विशिष्ट प्रदर्शन की राहत नहीं दी जा सकती है। उपरोक्त निष्कर्ष पर आते समय, (पुराने) विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 37 का संदर्भ दिया गया था जो (नए) विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 29 के बराबर है। इसलिए, उपरोक्त निर्णय लागू होगा मौजूदा मामले के तथ्य पर भी लागू होगा।

(13) फिर हमारे पास सर्वोच्च का एक और निर्णय है। न्यायालय ने जवाहर लाल वाधवा बनाम हरिपदा चैटरोबर्टी, (9) में दर्ज किया, जिसका निम्नलिखित अंश हमें दिशानिर्देश देता है:

“.....यह कानून में तय है कि जहां किसी अनुबंध का एक पक्ष अनुबंध का प्रत्याशित उल्लंघन करता है, तो अनुबंध का दूसरा पक्ष उस उल्लंघन को अनुबंध को समाप्त करने वाला मान सकता है और नुकसान के लिए मुकदमा कर सकता है। , लेकिन उस स्थिति में वह विशिष्ट प्रदर्शन की मांग नहीं कर सकता। दूसरे पक्ष, अर्थात् पीड़ित पक्ष, के लिए दूसरा विकल्प यह है कि वह निष्पादन के समय तक अनुबंध को जीवित रखने और विशिष्ट निष्पादन का दावा करने का विकल्प चुन सकता है, लेकिन, उस स्थिति में, वह अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन का दावा नहीं कर सकता है। जब तक वह अनुबंध को पूरा करने के लिए अपनी तत्परता और इच्छा नहीं दिखाता"।

सर्वोच्च न्यायालय के दो निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि एकमात्र निष्कर्ष यह है कि एक बार बयाना राशि/अग्रिम की वापसी या हर्जाना देने का मुकदमा दायर किया जाता है, तो ऐसा वादी खुद को वैकल्पिक राहत से वंचित कर देता है। विशिष्ट प्रदर्शन, भले ही मुकदमे में दावा किया गया हो। यदि ऐसा है, तो उसे पहली राहत के रूप में अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन और वैकल्पिक राहत के रूप में बयाना राशि/अग्रिम और/या हर्जाने की वापसी का दावा करने के लिए बाद में अपनी याचिका में संशोधन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यह मुख्य रूप से इस नियम पर है कि बयाना राशि/अग्रिम और/या हर्जाने की वापसी का दावा अनुबंध की अस्वीकृति पर आधारित हो सकता है। किसी न किसी कारण से और एक बार अनुबंध अस्वीकार कर दिए जाने के बाद, विशिष्ट प्रदर्शन की राहत वैकल्पिक राहत के रूप में उपलब्ध नहीं होगी, जैसा कि प्रेम राज के मामले (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट द्वारा आयोजित किया गया था, न ही ऐसी राहत स्वीकार्य होगी। जैसा कि इस मामले में संशोधन करने की मांग की गई है।

14) तदनुसार, हमारा विचार है कि सुंदरमय्यार के मामले में, लियारी कृष्ण के मामले में, आयिसाबी के मामले (सुप्रा) में दिया गया निर्णय, और जय भगवान के मामले (सुप्रा) में जे. वी. गुप्ता, जे द्वारा दिया गया निर्णय इसके अनुरूप है। सुप्रीम कोर्ट के फैसले और सही कानून का निर्धारण किया गया है और तरसेम सिंह के मामले (सुप्रा) में एस.एस. कांग, जे. द्वारा दिया गया निर्णय सही कानून का निर्धारण नहीं करता है और हम उसे खारिज करते हैं।

(15) हमने तरसेम सिंह के मामले (सुप्रा) में निर्णय को ध्यानपूर्वक पढ़ा है और उस मामले के तथ्यों पर, हमारे द्वारा संदर्भित और पालन किए गए निर्णय के मद्देनजर संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसमें शायद ही कोई विशिष्ट विशेषता हो। मूल बातें वही हैं, अर्थात्, मूल रूप से बयाना राशि और हर्जाना की वापसी के लिए एक मुकदमा दायर किया गया था और बाद में विशिष्ट प्रदर्शन के लिए एक डिक्री का दावा करने के लिए संशोधन की मांग की गई थी और बयाना राशि की वापसी और हर्जाना के भुगतान के विकल्प में . इसलिए, तरसेम सिंह के मामले (सुप्रा) में दिए गए फैसले को खारिज करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा है।

16) वादी की ओर से, गजानन जयकिशन बनाम प्रभाकर मोहनलाल (10), एक सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय और जोगा सिंह बनाम पाखर राम (11), इस न्यायालय के एक निर्णय पर भरोसा किया गया था कि मामले में, विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मुकदमे में विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 16 के तहत अपेक्षित कोई भी दावा निरीक्षण द्वारा वादपत्र में नहीं बनाया गया है, दावे को जोड़ने के लिए संशोधन की अनुमति दी जानी चाहिए ताकि विशिष्ट प्रदर्शन का दावा करने के लिए कार्रवाई का कारण पूरा हो सके। इन दोनों फैसलों का हमारे सामने जो मुद्दा उठता है, उससे कोई लेना-देना नहीं है. इसलिए, वे हमारे सामने विवादग्रस्त कानूनी मुद्दे को निपटाने में कोई मदद नहीं कर रहे हैं।

(17) तब वादी की ओर से यह तर्क दिया गया कि पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में, इस न्यायालय को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि मामला संहिता की धारा 115 के प्रावधानों के पैरामीटर के अंतर्गत नहीं आता है।

18) इसमें कोई विवाद नहीं है कि यदि कोई अधीनस्थ न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन करता है या अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में अवैधता करता है, तो पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में यह न्यायालय मामले को ठीक कर सकता है, यदि इस तरह से पीड़ित पक्ष के साथ स्पष्ट अन्याय होने वाला हो। एक आदेश। यहां तक कि तरसेम सिंह के मामले (सुप्रा) में भी, जिस पर वादी ने भरोसा किया था, पुनरीक्षण

(10) (एससी) 1990 (1) आरसीआर। 229.

(11) 1990 पीएलजे। 42.

में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया गया था और 30 जय भगवान के मामले (सुप्रा) में था। इसलिए, इस संबंध में जो तर्क उठाया गया है, वह पुनरीक्षण-याचिकाकर्ता को राहत देने के हमारे रास्ते में नहीं आता है, क्योंकि यदि विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मुकदमा जारी रखने की अनुमति दी जाती है, जब ऐसी राहत की अंततः अनुमति नहीं दी जा सकती है, तो यह निश्चित रूप से याचिकाकर्ता के साथ स्पष्ट अन्याय होगा।

(19) ऊपर दर्ज किए गए कारणों के लिए, हम संशोधन की अनुमति देते हैं और ट्रायल कोर्ट के आदेश को रद्द करते हुए संशोधन की अनुमति देते हैं, वादी के संशोधन के लिए आवेदन को खारिज कर दिया जाता है, जिससे पार्टियों को इस पुनरीक्षण में अपनी लागत वहन करने की अनुमति मिलती है।

(20) यदि वादी ने ट्रायल कोर्ट द्वारा वाद में संशोधन के लिए आवेदन दिए जाने के बाद अतिरिक्त न्यायालय शुल्क के साथ संशोधित वाद दायर किया है, तो वादी द्वारा भुगतान किया गया अतिरिक्त न्यायालय शुल्क उसे वापस कर दिया जाएगा। ट्रायल कोर्ट रिफंड आदेश जारी करेगा।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सुखवीर कौर
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
हिसार, हरियाणा